ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

हिंदी कहानी में बदलते जीवन मूल्य

Dr. Dwarka Prasad Meena

Associate Professor, Dept. of Hindi, SNMT Govt. Girls College, Jhunjhunu, Rajasthan, India

सार

समकालीन कहानियों में जीवन यथार्थ की अभिव्यक्ति हुई हैं। समकालीन कहानी जीवन के हर पहलू को वास्तविकता के साथ अभिव्यक्त करती हैं। देश में बदलती सामाजिक परिस्थितियों ने अनेक जीवन मूल्यों में परिवर्तन किया है। यही परिवर्तन मूल्य दृष्टी समकालीन कहानी में अभिव्यक्त हो रही है। समकालीन कहानीकार अपने जीवन के अनुभव कहानी में लाकर उन्हें काल व परिवेश के वृहत्तर प्रश्नों से जोड़ रहे है। "पहले के लेखक की एक अतिरिक्त सत्ता थी, इसीलिये वह रचना करता था। आज का लेखक रचना को झेलता है, क्योंकि हर जगह भागीदारी की हैसियत से वह विधमान रहता है।" (समकालीन कहानी दिशा और दृष्टि, पृष्ठ -171) समकालीन कहानी में परिवेश अधिक सशक्तता से प्रस्तुत हुआ है। नये जीवन और मूल्यगत संकट के परिप्रेक्ष में कहानीकारों ने बदली हुई जीवन स्थितियों और संबंधों में व्याप्त तनाव, विघटन और जटिलता को पहचान कर अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। भीष्म साहनी, धर्मवीर भारती, निर्मल वर्मा, अमरकांत, शेखर जोशी, हरिशंकर पारसाई, कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, रमेश बक्षी, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती आदि प्रमुख समकालीन कहानीकार हैं।

परिचय

समकालीन समाज में जो नयी पीढ़ी दिखायी दे रही हैं उनके जीवन मूल्यों में पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा तेजी से बदलाव हो रहा है। जिस कारण से समकालीन समाज में मानव के जीवन संबंधों में भी बदलाव हो रहा है। जीवन मूल्यों का प्रयोजन व्यक्ति के जीवन की सार्थकता के लिए अनिवार्य है क्योंकि जीवन मूल्यों को अपनाये बिना व्यक्ति, समाज, या राष्ट्र की उन्नति नहीं हो सकती। वस्तुत: जीवन मूल्यों का प्रोयजन ही समाज में नयी व्यवस्था का संचार करता है। ये मनुष्य को व्यक्तिगत स्वार्थ से निकालकर समाज के मानवीय कल्याण के लिए और लोकमंगल की भावना से प्रेरित कर उन्हें मानवतावादी भूमि पर प्रतिष्ठित करता है।[1]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज से ही उसका अस्तित्व निर्माण होता है। समाज में रहने के कारण मनुष्य को सामाजिक नीति-नियमों का पालन करना आवश्यक होता है। सामाजिक जीवन मूल्य में समाज ही केंद्र बिंदु है। समाज में नीति-नियम तथा रुढ़ि-परम्परा आदि को प्रमुखता दी जाती है। परिवार समाज का एक अंग है। परिवार में ही व्यक्ति का पालन-पोषण होता है। परिवार से ही व्यक्ति को समाज, देश के बारे में ज्ञान प्राप्ति होती है। पारिवारिक जीवन मूल्य के अंतर्गत परिवार को केंद्र में रखा जाता है। आज पारिवारिक संबंधों में तेजी से बदलाव हो रहा है। जिसका मुख्य कारण पुरानी पीढ़ी व नयी पीढ़ी के तौर-तरीकों में मेल न खाना तथा आर्थिक विषमता है। अतः समकालीन हिंदी कहानियों में बदलते जीवन संबंधों को हम इस रूप में देखते हैं-

समकालीन समाज में एक व्यक्ति के लिए पारिवारिक संबंधों से अधिक धन का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। जिस कारण ही हमारे समाज में बुजुर्गो के प्रति जो आदर भाव रहता था वह भी धीरे-धीरे गायब होता चला जा रहा है। उदय प्रकाश कृत 'छप्पन तोले का करधन' एक ऐसी ही कहानी है जिसमें धन की लालसा में पारिवारिक संबंध बिखरते नजर आते है। कहानी में करधन एक प्रकार का आभूषण है जो एक धनी परिवार को संबोधित करता है, जो छप्पन तोले का है। यह धनी परिवारों के द्वारा उपयोग में लाया जाता है। यह कहानी एक निर्धन परिवार की है, जो बेहद कठिनाई से जीवन यापन करता है। इस परिवार की दादी के पास ऐसा करधन है जो परिवार के अन्य सदस्यों को पता चलता है तो उन्हें लगता है कि इसके द्वारा उन लोगों की गरीबी दूर हो सकती है। पर दादी इस पर हमेशा चुप्पी साधी रहती है। उनके परिवार वाले हमेशा इस करधन को दादी से लेना चाहते है। इस कारण परिवार द्वारा दादी को द्वेष और तिरष्कार का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार दादी के माध्यम से लेखक उदय प्रकाश ने कहानी में दिखाया है कि एक बुजुर्ग के प्रति लोगों की स्थिति बेदम है। साथ ही कहानी में पारिवारिक रिश्तों को तार-तार होते हुए भी लेखक ने दिखाया है। आज पारिवारिक संबंध खोखले होते जा रहे है। लेखक का मुख्य उद्देश्य कहानी में अन्धविश्वास, गरीबी, भुखमरी, संबंधों की रिक्तता, संबंधों का टूटना तथा संबंधों में निसारता को दिखाना रहा है।[2]

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

समकालीन समाज में धन का महत्त्व इतना बढ़ गया हैं कि आर्थिक स्तर पर ही मुख्य रूप से पारिवारिक संबंध बदल रहे है। एक व्यक्ति जो नौकरी करता है तथा अचानक उसकी नौकरी छुट जाने से उत्पन्न स्थिति जिसमें बेकारी के साथ भूख की, पेट की आग शायद वह सबसे बड़ी आग जो धीरे-धीरे सब कुछ छीन लेती है। उषा प्रियंवदा कृत कहानी 'जिन्दगी और गुलाब के फूल' में हम देखते हैं कि किस प्रकार एक व्यक्ति की नौकरी छीन जाने से उसके जीवन में कितना बड़ा बदलाव आ जाता है, जिसके बारे में वह कभी सोच भी नहीं पाता। कहानी में सुबोध ऐसा ही पात्र है जिसकी नौकरी अचानक छुट जाती है जिसके उपरांत माँ-बहन-प्रेमिका..... ये सारे संबंध सुबोध को बदले हुए रूप में दिखाई पड़ते है। कथानायक सुबोध की नौकरी छुट जाने से ही घर की सत्ता छोटी बहन वृंदा के हाथ में आ गयी और इसी के साथ अब घर के काम वृंदा की सुविधा के अनुसार होते है। भले ही सुबोध का पुरूष हृदय वृंदा की सत्ता स्वीकार न करे, उसे अब वृंदा के आदेश मानने पड़ते है। तभी तो वह सोचता है कि- "वह कहा से कहा आ पहुंचा है।" नौकरी जाने के बाद ही सुबोध का आत्मसम्मान धुल गया है। अब वह छोटी बहन पर भार बना हुआ है। माँ-बेटी का व्यवहार भी उसके प्रति रूखा हो गया है और घर में नौकरों जैसा व्यवहार उसके साथ किया जाता है। विषाद, चिंता और कहीं भीतर से पराजय-बोध से पीड़ित अपने मौन संघर्ष में लीन सुबोध माँ के लिए अनजान और अपरिचित सा हो गया है। सबसे अधिक आश्चर्य तो वृंदा पर था- "यह वहीँ वृंदा थी जो उसके आगे पीछे घुमा करती थी।.... और अब? उसी के स्वर थे कि काम-न-धंधा तब भी दादा से यह नहीं होता की ठीक समय पर खाना तो खा ले।" आत्मग्लानी होती है सुबोध के अपने किवं की असफलता पर। इस कारण एक आत्म-विध्वंसक वृति उसमे घर करती गयी। जिन्दगी ने सुबोध को 'बिटर' बना दिया है और बेकारी ने उसे आत्मनिर्वासित कर दिया है।[3]

उषा प्रियंवदा अपनी कहानी 'वापसी' में भी ऐसी स्थिति उत्पन्न करती है जिसमें कहानी के महानायक गजाधर बाबु जो अपनी नौकरी से रिटायर्ड होकर अपने घर पहुँचते है| परन्तु अब स्थिति यह बन जाती है कि वे अब अपने ही परिवार में फिट नहीं बैठते, वे अपने ही परिवार के बीच अपने आप को अजनबी महसुस करते है| कहानी में वे बच्चों को शिक्षित करने के कारण वह खुद को परिवार से अलग रखते है। जिस परिवार को उन्होंने बहुत उत्साह, चाह से बनाया था, वही परिवार उनका न बन सका और अंततः गजाधर बाबु पुनः उस दुनिया की ओर अग्रसर हो जाता है जिसमें उनका अत्यधिक जीवन बिता। उनके जाने से किसी को निराशा नहीं हुई, परन्तु खुद गजाधर बाबु निराशा और वेदना से पीड़ित होते है। वहाँ के सदस्यों को पिताजी के आ जाने से घुटन महसूस होती है और उनके जाने के बाद स्वतंत्र और ख़ुशी होती है गजाधर बाबु खुद को विवशता के कारण उस रूप में ढालते है और एकांकीपन स्वीकारते है। लेखिका उषा प्रियंवदा कहानी के प्रारंभ में ही दिखाती है कि गजाधर बाबु अपने ही परिवार में फिट नहीं बैठ पाते- "अगले दिन वह सुबह घूम कर लौटे तो उन्होंने पाया बैठक में उनकी चारपाई नहीं है।" गजाधर बाबु जीवन में देखते है कि रिक्त स्थान की पूर्ति नहीं होती, परन्तु भरे चीज में भरना या समाना मुश्किल होता है।[4]

मधु कांकरिया ने भी अपनी कहानी 'कीड़ें' में श्रीकांत वर्मा के माध्यम से दिखाया है कि किस प्रकार उनके नौकरी से सेवानिवृत होने के उपरांत उन्हें एक रोग लग जाने भर से ही उनका अपने ही परिवार से तिरस्कार कर दिया जाता है| कहानी में हिंदी के प्रोफ़ेसर श्रीकांत वर्मा के परिवार का चित्रण किया है। श्रीकांत जीवन भर अपने बच्चों और पत्नी को सारी सुविधाएँ देते रहे। सेवा से निवृत होने के बाद श्रीकांत को कीड़े का रोग लग जाता है तो बच्चों के साथ पत्नी भी उनका तिरस्कार करती है। व्यक्ति जब तक काम कर के पैसा कमाता है, तब तक परिवार के लोग उसे गौरव, सम्मान देते है, उनका आदर करते हैं। निवृत्ति के बाद श्रीकांत को देखने की जिम्मेदारी पत्नी के साथ-साथ बच्चों की थी। लेकिन कोई उनका खयाला नहीं रखता। कहानी के अंत में मयंक, मोहित अपने पिता को घर बुलाने जाते है तो पिता कहते हैं- "जीवन पर मेरी रे बदल चुकी है। में इन कीड़ों का कृतज्ञ हूँ। जिन्होंने ब्रह्माण्ड की तरह मुझे मृत्यु और संबंधों के कई रूप दिखाए और अंततः मेरी आत्मा पर लगे अंध-मोह और अज्ञात के कीड़ों को झाड़ दिया है। शीघ्र ही कुछ न किया गया तो मनुष्यता को लगे ये कीड़े वह सब नष्ट कर देंगे जो शिव है, सुन्दर है, पवित्र है और मानवीय है।" आधुनिकता के तेज जीवन में बच्चों को माता-पिता का ख्याल रखने के लिए समय नहीं मिल रहा है। वे इतने व्यस्त रहते हैं कि खुद के बारे में उनको सोचने के लिए समय नहीं रहता है।[5]

समकालीन समाज में संयुक्त परिवार के टूटते चले जाने का एक प्रमुख कारण युवाओं का शहर की ओर आकर्षित होना है| युवाओं का शहरों की ओर रुख करने से बूढ़ों की अपनी समस्याएँ बढ़ी है। इस असहाय अवस्था में बुजुर्ग व्यक्ति अकेले पड़ते जा रहे है। उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं रह गया है। ये लोग अकसर अपनी पुरानी सोच के कारण गॉव में ही रह जाते है। ज्ञानरंजन अपनी कहानी 'पिता' में पुरानी पीढ़ी के इसी रूढ़िवादिता को उदघाटित किया है। कहानी में पुरानी पीढ़ी का अपने समकालीन परिवेश से कटते चले जाने का दर्द चित्रित है। इस कहानी के पिता असहाय नहीं है। वे संयुक्त परिवार के एक सम्मानित सदस्य है। वे परिस्थितियों के अनुरूप खुद को ढाल लेते है तथा वे स्वाभिमानी भी है। किसी का अहसान नहीं लेना चाहते, यहाँ तक की अपने बेटे

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

तक का भी नहीं। बहन की पढाई में भाई द्वारा खर्च किए गए रुपयों का हिसाब रखते है और एक दिन उस भाई को उतने रुपयों की एक पासबुक थमा देते है। उन्हें शक है कि कहीं भविष्य में उनका बेटा अपनी बहिन को यह अहसास न होने दे कि उसी की बदौलत उस बहन ने अपनी पढाई पूरी की। तब शायद उसे अत्यंत मार्मिक पीढ़ा से गुजरना पड़ेगा और वह अपने पिता को माफ़ नहीं कर पाएगी। इस दृष्टी से पिता का यह कदम दूरदर्शितापूर्ण लगता है। पिता के इस कदम को भले ही अटपटा मान लिया जाए पर यह हमारे सामाजिक जीवन की एक सच्चाई है और कोई भी स्वाभिमानी पिता अपनी संतान पर दूसरों का अहसान बर्दाश्त नहीं करता। पुरानी पीढ़ी के लोगों में इस तरह की प्रवृति देखने को मिलती है जिस कारन ही आज की पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में तेजी से बदलाव हो रहा है तथा इसी कारण रिश्तों में बिखराव भी देखने में मिलता है।[6]

समकालीन समाज में मध्यम वर्गीय व्यक्ति की उच्च वर्ग में जाने की चाह के कारण उसकी अवसरवादिता और महत्वकांक्षा भी पारिवारिक संबंधों के विघटन का रक प्रमुख करण है| भीष्म साहनी कृत 'चीफ़ की दावत' कहानी का मुख्य उद्देश्य मध्यम वर्गीय व्यक्ति की अवसरवादिता, उसकी महत्वाकांक्षा में पारिवारिक रिश्ते के विघटन को उजागर करना है। माध्यम वर्ग के व्यक्ति हमेशा उच्च वर्ग में शामिल होने के अवसरों की तलाश में रहता है, चाहे वह स्वयं निम्न वर्ग से मध्यवर्ग में पंहुचा हो। इस कहानी का महानायक शामनाथ दफ्तर की नौकरी पाकर उच्च पद पाने की महत्वाकांक्षा रखने लगा और उस की पूर्ति के लिए अपने दफ्तर के विदेशी चीफ़ की खुशामद में लग गया। चीफ़ की दावत का प्रबन्ध अपने घर में करके वह अपनी भुधि माँ की उपेक्षा करता है। महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए माँ के साथ उसका खून का रिश्ता भी गौण हो जाता है। चीफ़ की दावत के समय बूढी माँ प्रदर्शन योग्य वस्तु नहीं, बल्कि कूड़े की तरह कहीं छिपाने की वस्तु हो गयी है। लेखक भीष्म साहनी ने इस कहानी के माध्यम से दिखया है की किस प्रकार आधुनिक परिवारों में बूढों की उपेक्षा होती है और उनकी क्या दुर्दशा होती है।[7]

अत: हम कह सकते है की समकालीन समाज में पारिवारिक पवित्र संबंधों की ऊष्मा और आत्मीयता पहले से बहुत कम होकर रह गयी है और उतरोत्तर कम होती चली जा रही है। सच तो यह है कि स्वतंत्र्योत्तर भारत में खंडित पारिवारिक संबंधों की वृद्धि का मुख्य कारण आर्थिक विषमता या पुरानी पीढ़ी व नयी पीढ़ी की सोच में अंतर का होना है। जिस कारण ही आज विदेशी संस्कृति के प्रभाव से वृद्धाश्रमों की संख्या दिन-ब-दिन बढती जा रही है। आज अधिक पैसा कमाने के लालच में मनुष्य अपने परिवार, परिवार के सदस्यों की मानसिकता, उनकी भावनाएं, ईच्छाओं के बारे में सोचने के लिए न समय है न संयम।[8]

विचार-विमर्श

साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि होता है। वह अपने युग की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। अत: उसकी कृतियों में युगीन परिस्थितियों की स्पष्ट छाप रहती है। सन् 1960-1965 के बाद की लिखी गई कहानियों में अत्यधिक उग्रता और निर्ममता और यथार्थ की क्रूरता की प्रवृतियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। ये कहानियाँ प्राय: उन लेखकों की हैं, जो स्वाधीन भारत में जन्में और बड़े हुए तथा जिन्हें देखने को मिला स्वतंत्र भारत का क्रूर यथार्थ, स्वार्थ परायण व्यवस्था, भ्रष्टाचार, समाज की विषम भयावह विसंगतियाँ, बेकारी, असुरक्षा। इन साहित्यकारों ने परंपरागत रूढ़ि-संप्रदायों का विरोध किया और जीवन के नये मान्यताओं पर बल दिया। मन्नु भंडारी, मंजुल भगत, मृणाल पांडेय, राजी सेठ, उषा प्रियंवदा, सुधा अरोड़ा आदि महिला लेखिकायें इस दृष्टि से प्रमुख कही जा सकती हैं। इनसे जुड़ते हुए परंतु थोड़ी बहुत भिन्नता के साथ उभरकर आया हुआ एक नाम है मधु कांकरिया, जिन्होंने नये विषयों को लेकर अपने कथा-साहित्य का सृजन किया।[9]
'मूल्य' शब्द संस्कृत की 'मूल' धातु में 'यत्' प्रत्यय लगने से बना है, जिसका अर्थ कीमत, मजदूरी आदि होता है। वस्तुत: 'मूल्य' अंग्रेजी के 'ळग्न्ज्ल्' शब्द का पर्याय है। 'ळग्न्ज्' शब्द लैटिन भाषा के 'ळग्न्ज्श्ज्' से बना है, जिसका अर्थ अच्छा, सुंदर (हज्न्) होता है। इसकी सामान्य परिभाषा यह बनती है कि 'जो कुछ भी इच्छित है, वही मूल्य है। इसी कारण कुछ विद्वान 'ळग्न्ज्ल्' शब्द के लिए संस्कृत के 'इष्ट' शब्द को समानार्थी रूप में प्रयुक्त करना चाहते हैं। मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्री 'सहज ज्ञान और इच्छा' को आधार बनाकर ही मूल्य शब्द की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। वे लक्ष्य, आदर्श और प्रतिमान की संजीवित समग्राकृति की मनोग्रंथी को ही मूल्य कहते हैं। उनके अनुसार अभिवृत्तियों का आंतरिक स्वरूप ही मूल्य है।1 महादेवी वर्मा जी ने मूल्य को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "वास्तव में थोडे से सिद्धांत में जो मनुष्य को मनुष्य बनाते हैं, हम उन्हीं को जीवनमूल्य कहते हैं। 'सिद्धांत' शब्द मानवोचित आदर्शात्मक कृत्यों की ओर संकेत करता है। अत: सदाचरण तथा सद्गुण स्वयं ही मूल्य को निरूपित एवं उद्घाटित कर देते हैं। गुण स्वयं में मूल्यवान होने से मूल्य शब्द का ही समानार्थक बन जाता है।"2
जीवन मूल्य मानव जीवन को अधिक से अधिक व्यवस्थित बनाते हैं। मूल्य मानव जीवन में कई प्रकार से कार्यान्वित होते हैं। जैसे- वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक,धार्मिक आदि। इन जीवन मूल्यों से मानव को सुख, शांति मिलती है। इस प्रकार के जीवन मूल्यों को हम मधु कांकरिया के कहानियों में हम देख सकते हैं।[10]

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

§ वैयक्तिक जीवन मूल्य :

वैयक्तिक जीवन मूल्य के अंतर्गत व्यक्ति प्रधान होता है। व्यक्ति की भावनाएँ, ईच्छाएँ प्रमुख होती हैं। यह मूल्य व्यक्ति केंद्रित होता है। 'और अंत में ईशु' कहानी का नायक विश्वजीत समाज में हो रहे अन्याय, अत्याचा को रोकने के लिए नक्सलवादी बनता है। लेकिन नक्सलवाद में भी उसे सफ़लता नहीं मिलती। इसी निराशा में वह ड्रग एडिक्ट बनता है। वह ड्रग का इतना आदि होता है कि वह उसके लिए अनिवार्य हो जाता है। ड्रग खरीदने के लिए लोगों से पैसा मांगता है। समाज, धर्म, रूढ़ि-संप्रदायों से विश्वजीत के वैयक्तिक जीवन पर हुए परिणामों से वह त्रस्त होता है। हिंदू धर्म के प्रति उसके मन घृणा पैदा होती है। इसी समय विश्वजीत ईसा मसिहा के उपदेशों से प्रभावित होकर ईसाइ बनने का निर्णय लेता है। वह कहता है कि "जो संस्कृति गिरे हुओं को उठाती है, उन्हें क्षमा करना जानती है, वह चाहे जिस किसी भी कारण से एेसा करे, मैं उस संस्कृति का सम्मान करता हूँ।"3 एेसे समय में व्यक्ति अपने वैयक्तिक जीवन को महत्व देता है न कि समाज, धर्म को। लेखिका ने यहाँ यह बताना चाहती है कि समाज, धर्म से बड़कर व्यक्ति होता है। व्यक्ति से ही समाज, धर्म का निर्माण हुआ है। व्यक्ति के बिना न समाज है न धर्म। 'मुहल्ले में' नामक कहानी में भी लेखिका ने वैयक्तिक जीवन का चित्रण यथार्थ रूप में किया है। इस कहानी का प्रमुख पात्र है डा.योगेश गुप्ता। ये हमेशा अपने नाम डिग्री, ओहदे और लोगों में श्रेष्ठ बनने के बारे में सोचते रहते हैं। उन्हें अपने नाम और डाक्टरी डिग्री पर इतना मोह है कि लेटर बाक्स पर बड़े स्टाईल से अपना नाम लिखवाते हैं और उसे घर के बाहर एेसे लटकाते हैं कि किसी भी कोने से देखने पर दिखायी दे। घर और अस्पताल में अपने लेटर बाक्स को बार-बार देखकर मुस्कुराते हैं। नये मुहल्ले में आने के बाद वहाँ के बड़े-बड़े आकर्षक और आलिशान घरों को देखकर अपने स्थिति पर दु:खी होते हैं। उन्हें लगता है कि "इस देश में तो बुद्धिजीवियों की कुछ भी कद्र नहीं।"4 लेखिका का मानना है कि व्यक्ति अपने नाम, ओहदे को औसत से ज्यादा महत्व देता है तो दु:खी होता है। आधुनिकता के प्रभाव के कारण आज व्यक्ति अंदर से इतना टूटता जा रहा है कि वह अपना आत्मिक सुख, विचारधार, आंतरिक चेतना को भूल रहा है। विदेशी आकर्षणों से प्रभावित होकर अर्थ प्राप्ति को ही सुख मान रहा है।

§ पारिवारिक जीवन मूल्य :

परिवार समाज का एक अंग है। परिवार में ही व्यक्ति का पालन-पोषण होता है। परिवार से ही व्यक्ति को समाज, देश के बारे में ज्ञान प्राप्ति होती है। पारिवारिक जीवन मूल्य के अंतर्गत परिवार को केंद्र में रखा जाता है। परिवार के सदस्यों, उनकी भावनाओं, उनकी समस्याओं पर चिंतन-मनन किया जाता है।[11]

'कीड़े' कहानी हिंदी के प्रोफेसर श्रीकांत वर्मा के परिवार से संबंधित है। श्रीकांत अपने बच्चों, पत्नि को सारी सुविधायें देते रहे। सेवा से निवृत्त होने के बाद श्रीकांत को कीड़े का रोग लग जाता है तो बच्चों के साथ पत्नि भी उनका तिरस्कार करती है। व्यक्ति जब तक काम कर के पैसा कमाता है, तब तक परिवार के लोग उसे गौरव, सम्मान देते हैं, उनका आदर करते हैं। निवृत्ति के बाद श्रीकांत को देखने की जिम्मेदारी पत्नि के साथ-साथ बच्चों की थी। लेकिन कोई उनका खयाल नहीं रखता। कहानी के अंत में मयंक, मोहित अपने पिता को घर बुलाने जाते हैं तो पिता कहते हैं- "जीवन पर मेरी राय बदल चुकी है। मैं इन कीड़ों का कृतज्ञ हूँ। जिन्होंने ब्रम्हांड़ की तरह मुझे मृत्यु और संबंधों के कई रूप दिखाए और अंतत: मेरी आत्मा पर लगे अंध-मोह और अज्ञात के कीड़ों को झाड़ दिया है।ङ्कयदी शीघ्र ही कुछ न किया गया तो मनुष्यता को लगे ये कीड़े वह सब कुछ नष्ट कर देंगे जो शिव है, सुंदर है, पवित्र है और मानवीय है।"5 आधुनिकता के तेज जीवन में बच्चों को माता-पिता का खयाल रखने के लिए समय नहीं मिल रहा है। वे इतने व्यस्त रहते हैं कि खुद के बारे में उनको सोचने के लिए समय नहीं रहता है। अधिक पैसा कमाने के लालच में मनुष्य अपने परिवार, परिवार के सदस्यों की मानसिकता, उनकी भावनाएँ, ईच्छाओं के बारे सोचने के लिए उसके पास न समय है न संयम। विदेशी संस्कृति के प्रभाव से आज कल वृद्धाश्रमों की संख्या दिन-ब-दिन बड़ती जा रही है। संघटित परिवार टूटकर बिखर रहे हैं। वसुदैव कुटुंबकम की भावना मिट रही है। आज माता-पिता अपने बच्चों के लिए बोझ बन गये हैं। वृद्धावस्ता में माता-पिता की सेवा करना बच्चों का कर्तव्य होता है। लेकिन आज के बदलते संदर्भों में इस तरह के आदर्शों के लिए कोई स्थान नहीं है। मनुष्य का जीवन यांत्रिक बन गया है।

'फैलाव' कहानी में श्रुति का अपना सुखी परिवार है। अपने परिवार में कुछ बदलाव लाना चाहती है। इसी कारण पति के साथ काम करती है। सेक्स के संबंध में पति-पत्नि के बीच मन्मुटाव पैदा होता है। जब श्रुति घर में रहती थी तब उनके बीच कोई संघर्ष पैदा नहीं हुआ था। आम तौर पर शहरों में पति-पत्नि दोनों काम करते हैं। नारी भी पुरूष के समान काम करती है। श्रुति भी पहले कभी क्षीतिज को उस विषय पर निराश नहीं किया था। क्योंकि उसे सीख मिला था कि "पति को मना करने का मतलब अपने ही पाँवों पर कुल्हाड़ी मारना। हर रात उन्हें चाहिए कोई 'मादा' अगले दिन की 'किक' के लिए।"6 लेकिन आजकल बाहर जा कर काम करने के कारण उस विषय में रूचि नहीं लेती। इसी कारण दोनों में जगड़ा होता है। दोनों में अगर एक स्थिति को समझ पाता तो एेसा नहीं होता था। काम के तनाव के कारण पति-पत्नि में इतना संयम नहीं रहता। क्षीतिज, श्रुति की स्थिति को समझ पाता या श्रुति क्षीतिज को समझती तो उनके बीच ये संघर्ष पैदा नहीं होते। पति-पत्नि होने के नाते उनमें ताल-मेत होना चाहिए था।[12]

§ सामाजिक जीवन मूल्य :

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज से ही उसका अस्तित्व निर्माण होता है। समाज में रहने के कारण मनुष्य को सामाजिक नीति-

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

नियमों का पालन करना आवश्यक होता है। सामाजिक जीवन मूल्य में समाज ही केंद्र बिंदु है। समाज के नीति-नियम, रूढ़ि-परंपरा आदि को प्रमुखता दी जाती है।
'दाखिला' कहानी में शहरों में बच्चों को स्कूल में दाखिला करवाने के लिए माँ-बाप को किस प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है यही दिखाया गया है। बदलते परिस्थितियों के अनुसार शिक्षण पद्धती में भी परिवर्तन आ रहे हैं। विशेष रूप से नगरीय शिक्षण व्यवस्था में बहुत तीर्व गति से बदलाव आ रहे हैं। आधुनिकता के कारण विदेशी संस्कृति के प्रभाव के कारण आज परिवार बिखर रहे हैं। पति, पत्नि अपने अहम में ही रहते हैं। इसका परिणाम बच्चों पर पड़ रहा है। स्कूल में दाखिला करते वक्त माँ-बाप का होना आवस्यक हो गया है। अगर दोनों में कोई एक नहीं है तो उस बच्चे को स्कूल में दाखिला नहीं मिलता है। विक्रम अपनी माँ को समझाता है कि "इस बार तुम गड़बडी नहीं करना। इंतरव्यूव की रूम में घुसते ही कह देना फादर को पापा हमारे साथ नहीं रहते, नहीं तो पिछले इंतरव्यूव की तरह इस बार भी मेरा नहीं हो पाएगा।"7 समाज में आज यह समस्याँ सामान्य बन गयी है। हमारे पारिवारिक, सामाजिक जीवन मूल्य, आदर्श अपने महत्व को खो रहे हैं।
आदिवासी समाज के भी अपने कुछ रूढियाँ, परंपराएँ, प्रथायें होती हैं जिनका पालन करना उनके लिए आवश्यक होता है। उनका उल्लंघन करने पर उन्हें समाज से बाहर भी कर दिया जाता है। एेसे ही आदिवासियों से संबंधीत कहानी है 'शून्य होते हुए'। इस कहानी में भैरों की पुत्री विवाह पूर्व गर्भवती हो जाती है। इस घटना से भैरों बहुत ही चिंतित होता है। अपने सामाजिक मर्यादा से डर कर डा. विजय के पास उसका गर्भपात करने के लिए बिनती करता है। डा. विजय भी भैरों की स्थिति को देखकर गर्भपात करने के लिए तैयार हो जाते हैं। एक जिम्मेदार डाक्टर होने के नाते डाक्टर.विजय को यह काम नहीं करना था। फिर भी वे ये काम करते हैं। इसका कारण यह था कि उस समय भ्रूणहत्या कोई अपराध नहीं था और उसके लिए कोई सजा भी नहीं थी। इसका गलत फायदा धर्माधिकारी उठाते हैं। यहाँ तक की उस समय यह एक व्यापार ही बन गया था।

§ धार्मिक जीवन मूल्य :

मनुष्य के जीवन में धर्म का महत्व अत्यंत अधिक है। धर्म के कारण व्यक्ति में श्रद्धा, भय, संस्कार आदि मूल्य समाहित होते हैं। धार्मिक मूल्यों के अंतर्गत धर्म, आत्मा, परमात्मा, मोक्ष आदि व्ािषयों के बारे में विचार-विमर्श किया जाता है।
'भरी दोपहरी के अंधेरे' कहानी में विशेष रूप से जैन धर्म के रीइ-रिवाज, जीवन शैली, संप्रदायों की चर्चा की गयी है। जैन सन्यासियों की कथा सुनने के बद उनका जीवन बहुत ही कठिण है एेसा लगता है। उनके कुछ आचर्ण बहुत ही कठीण हैं। निर्वस्त्र रहना, कच्छा पानी पिना, स्त्री से दूर रहना सन्यासी बनना आदि आचरण हर एक की बस की बात नहीं है। आज व्यक्ति सोचता है कि इतनी कठीण साधन करके भगवान को प्राप्त करने के बजाय संसार में रह कर ही सब को मानवीय प्रेम प्रधान करके उस भगवान को हासिल कर सकते हैं। क्योंकि हर धर्म पवित्र मानवीय प्रेम का संदेश देता है। इतने कठीण परिश्रम, त्याग करने पर भी जैन मुनि अपने आपसे संतुष्ठ नहीं हैं। जिस शांती के लिए, सुख के लिए वे संसार से दूर रह रहे हैं वो उनको नहीं मिला है। शिबू का मित्र बेहोश पस्ज़ा था, उसके पाथे से खून बह रहा था। एेसे समय में भी जैन मुनि अपने वे नियम पर अड़े रहे। अनेक मिन्नतों के बाद भी सहायता नहीं करते। सच्चा धर्म वही होता है जो व्यक्ति के कष्ठ में उसको सहारा देता है। क्योंकि व्यक्ति के प्राण से बड़कर संसार में कोई चीज नहीं है। आधुनिक व्यक्ति इतने सारे कष्टों को सहकर अपने संसार से दूर रखकर कोई धर्म को अपनाना पसंद नहीं करता। एेसे अन्य कारणों से व्यक्ति अपने धर्म को त्याग कर दूसरे धर्म को अपना रहा है।[13]

§ समष्ठिगत जीवन मूल्य :

समष्ठिगत जीव मूल्यों में व्यक्ति की वैयक्तिकता या पारिवारिकता को महत्व न देकर समाज, रष्ठ्र, विश्व मानवीयता को महत्व दिया जाता है। मधु कांकरिया के 'काली पैंट' कहानी में इसे हम देख सकते हैं।
'काली पैंट' कहानी में कर्नल रंजीत मेहरोत्रा के कहानी है। भारत-चीन के युद्ध के समय में लड़ते लड़ते उनका दायाँ पैर पूरी तरह जख्मी हो गया था और उसे मजबूरन काटना पड़ा। अपने भतीजे से मिलने सप्ताह भर के लिए कलकत्ता आये थे। कालेज के लड़के-लड़कियाँ उनके साथ बूरा व्यवहार करते हैं। आज की युवा पिढ़ी में व्यक्ति के स्थितियों, कारणों को जानने तक का संयम नहीं है। आज देश के लिए अपना सबकुछ त्याग करनेवाले सैनिकों को पूर्ण सम्मान नहीं मिल रहा है। उनके धैर्य, साहस पहचान कर प्रोत्साहन देनेवाले नहीं हैं। देश के लिए मर मिठनेवाले सैनिकों की अनेकों समस्याओं का समाधान नहीं मिल रहा है। लेखिका युवा पिढ़ी को बताना चाहती है कि देश, आजाद है तो हम हैं वरना कुछ भी नहीं। सबसे पहले देश आता है, फिर समाज, फिर परिवार उसके बाद व्यक्ति। पर आजकल सबकुछ उल्टा हो रहा है।
निष्कर्श रूप में हम कह सकते हैं कि मधु कांकरिया के कहानियों में व्यक्ति से लेकर समष्ठी तक के विचारों को दर्शाया गया है। व्यक्ति के वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक और समष्ठिगत जीवन मूल्यों का चित्रण करके, जीवन मूल्यों की महत्ता, सार्थकता और बदलते स्थितियों के अनुसार जीवन मूल्यों में हो रहे परिवर्तन को दिखाने का प्रयास लेखिका ने किया है।

परिणाम

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

'राजेंद्र जी गोष्ठियों में खूब जाते हैं, आप क्यों नहीं?' हौजख़ास के राजेंद्र दंपती-आवास पर हुई एक भेंट में मैंने मन्नू जी से पूछा था।उनका उत्तर था- 'राजेंद्र जी का अपना एक सुनिश्चित विचार- चिंतन है, जिसे साझा करने के लिए वे गोष्ठियों में जाते हैं।मगर मैं क्या बोलूंगी?' जाहिर है, उनका यह सरल निष्कपट उत्तर उनके पारदर्शी, सहज और निर्कुंठ व्यक्तित्व का ही उद्घोष था और यही सहजाभिव्यक्ति उनकी कहानियों की ताकत रही है।लेखन उनके अंतस का दर्पण है तो आंतरिक और बाह्यजगत के मध्य सामंजस्य हेतु एक संवाद भी है।इसी सकारात्मक सोच से हिंदी कथालेखन में उनकी विशिष्ट पहचान बनती है।लोकप्रिय उपन्यास- 'आपका बंटी' को कौन भूल सकता है।रचनात्मक लेखन उनके लिए सांस लेने जैसी अनिवार्यता थी इसीलिए रचना-प्रक्रिया भी आसान थी; कसरत, प्राणायाम या प्रसव-पीड़ा जैसी अनुभूति नहीं।[14]

१९५० के बाद की कहानियों को पढ़ते हुए जो विशेषताएं पाठकीय मानस पटल पर रेखांकित होती हैं उनमें आधुनिकताबोध, अकेलापन, संत्रास, टूटन और अलगाव जैसे भावबोध के गहरे रंग होते हैं।ये प्रवृत्तियां, पश्चिमी दर्शन के प्रभाववश भारतीय व्यक्ति की शिराओं में भी रक्तधारा की भांति प्रवाहित होने लगीं।पहली बार इन प्रवृत्तियों को साहित्य में, खास तौर से कथा कृतियों में चिह्नित किया गया और इनका प्रस्तुतीकरण आधुनिक जीवन के यथार्थबोध और आनुभूतिक सचाई के रूप में हुआ।अठारहवीं सदी की औद्योगिक क्रांति, बौद्धिकता, वैज्ञानिक सोच, तार्किकता और प्रश्नाकुलता जैसी चीजें भारत में दो सौ वर्षों के पश्चात बीसवीं शताब्दी के समाज, संस्कृति और कला-साहित्य में स्पष्ट दिखाई देने लगीं।इस संक्रमण काल में पारंपरिक जीवन-मूल्यों की अहमियत घटी और रुझान बढ़ती है नए मूल्यों के प्रति।मनोविश्लेषणवाद, मार्क्सवाद और अस्तित्ववादी जैसी विचारधारा ने स्वयं भारतीय बाना धारण कर लिया।फलत: उनके ही आलोक में नए रचनाकारों ने परिस्थिति, परिवेश की संरचना की और जो चरित्र गढ़े, उनसे सामाजिकता के छोर छूट रहे थे।उनका व्यवहार मर्यादित न था और न ही नैतिक, मगर उनके वजूद को खारिज करना आसान भी नहीं था।अस्तु, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा अग्निहोत्री जैसी लेखिकाएं उस दौर में महिला लेखन का परचम फहराती हुई दिखाई देती हैं।सबने बदलती हुई जीवनधारा की बखूबी शिनाख्त की और उसे गहराई से अभिव्यंजित किया। अत: कथाविन्यास में बदलते जीवन-मूल्य, संबंधों का खोखलापन, पीढ़ियों के विरोधाभासी संबंध, अंतर्विरोध की जटिलता, स्त्री की पराधीनता, स्वतंत्रता की जद्दोज़हद, नैतिकता के बजाय जीवन सच के साक्षात्कार और महानगरीय जीवन की त्रासद विडंबनाओं को विषयवस्तु के रूप में वर्णित किया गया है।उनके कहानी संग्रहों के नाम हैं- एक प्लेट सैलाब, मैं हार गई, तीन निगाहों की एक तस्वीर, यही सच है, नायक खलनायक विदूषक, त्रिशंकु, श्रेष्ठ कहानियां और पांच लंबी कहानियां।प्रस्तुत लेख में उनकी प्रमुख कहानियों- 'त्रिशंकु', 'अभिनेता', 'तीसरा आदमी', 'मै हार गई', 'एक प्लेट सैलाब', 'अकेली', 'रजनी', 'सयानी बुआ', 'स्त्री सुबोधिनी, 'मुक्ति' और 'यही सच है' के पाठ-संवाद और विवेचन-विश्लेषण द्वारा मन्नू जी की संवेदना-धुरी को चिह्नित किया जाना चाहिए।इनसे ही उन्हें कहानीकार के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त होती है और वे कथालेखन की प्रमुख स्तंभ बनाती है।[15]

परंपरा बनाम आधुनिकता अर्थात पीढ़ियों के अंतर्विरोध की दृष्टि से कहानी 'त्रिशंकु' उल्लेखनीय है।तीन पीढ़ियों के मध्य सरकते-खिसकते पारंपरिक मूल्य, संस्कार, आस्था, विश्वास, नैतिकता और आधुनिकतावादी विचार-बौद्धिकता, तार्किकता, वैज्ञानिकता आदि के टकराहटों की कहानी त्रिशंकु में माँ-बेटी के मध्य नाना की भी उपस्थिति जब-तब होती है।कहानी लेखन का यह वह दौर था, जब आधुनिकता और आधुनिकतावाद के प्रति खासा आग्रह लेखकों में दिखाई देता है।रचनाकारों की कथात्मक अभिव्यक्तियों में यही सोच स्पष्ट होती है कि तत्कालीन स्थितियां संक्रमण के कारण परिवर्तनशील थीं।वैज्ञानिक दृष्टिसंपन्न व्यक्ति लीक का फकीर नहीं होता, उसमें बदलाव के लिए तड़प होती है, किंतु संस्कार और सामाजिक दबाववश वह दो कदम पीछे भी हो लेता है। 'त्रिशंकु' कहानी में तनु की मम्मी स्वयं को आधुनिक, बौद्धिक और विचारशील मानती हैं, विशिष्ट भी, क्योंकि उन्होंने अपने पिता का विरोध कर प्रेम विवाह किया।स्वजीवन के लिए निर्णय लेना दृढ़ता और बुद्धिमत्ता का परिचय जो होता है।इसीलिए उनकी निगाह में मुहल्ले की औरतें पिछड़ी मानसिकता की हैं।व्यक्ति स्वयं जब नई राह पकड़ता है तब वह परिजनों का विरोध कर स्वयं के कार्य को प्रशंसित भी करता है।परंतु जब उसके बच्चे पारंपरिक मूल्य को तिलांजलि देकर नए पथ पर चलने का जोखिम उठाना चाहते हैं तब वही उन्हें रोकने का भरपूर प्रयत्न करता है।मानो उसके भीतर परकाया प्रवेश हुआ हो[16] और उसके मां-बाप ही रोक-टोक कर रहे हों।व्यक्तित्वांतरण की इस प्रक्रिया में ही पारंपरिक मूल्य गतिशील होते हैं।निचोड़ यह कि अत्यधिक ममता और सुरक्षा की जिम्मेदारी के कारण बेटी के प्रति अभिभावक बेफिक्र नहीं हो पाते।जोखिम का खतरा अपने लिए युवावस्था में भले उठाएं हों, बच्चों के लिए सोचना भी नहीं चाहते।तनु कहती है, 'मम्मी को अगर नाना बनकर ही व्यवहार करना है तो मुझे भी मम्मी की तरह मोर्चा लेना होगा। ...दिखा तो दूं कि मैं भी तुम्हारी ही बेटी हूँ और तुम्हारे ही नक्शेकदम पर चली हूँ'।वस्तुत: व्यक्ति के द्वंद्व-अंतर्विरोध को रेखांकित करना ही कहानी का उद्देश्य है।कहानी में नई पीढ़ी की तनु एक आब्जर्वर के रूप में अपनी मां और नाना के संक्रमित होते विचारों की आवाजाही को साफ-साफ देख पाती है और उसी के स्वर में कहानीकार का स्वर भी प्रस्फुटित होता है।
उनकी निजी जिंदगी एकदम सूनी है।जब उनका युवा पुत्र दिवंगत हुआ तो पुत्रशोक में पति संन्यासी बनकर हरिद्वार रहने लगता है।परिणामस्वरूप वे मुहल्ले-टोले की तमाम गतिविधियों में तत्परता से जुड़कर अपने जीवन की नैया स्वयं को व्यस्त रखकर पार

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

करना चाहती हैं और इन गतिविधियों में प्रसन्न भी रहती हैं।इस युक्ति में वे अन्य से न सामाजिक शिष्टाचार की अपेक्षा करती हैं और न ही विवाह जैसे आयोजन के लिए निमंत्रण की अनिवार्यता समझती हैं, बस पहुंच जाती हैं।मगर पति की महीने भर बाद लौटने पर उनके इस तरह के कृत्यों पर पाबंदी लगती है।[17]

'बुआ' जैसे रिश्ते में आत्मीयता के भावों-नि:स्वार्थ प्रेम, उज्ज्वल पवित्रता, सहज वात्सल्य और देखरेख की तत्परता का अतुलनीय सम्मिश्रण होता है।इसीलिए परिवार और मोहल्ले-टोले में इस रिश्ते का व्यवहार पक्ष अधिक सकारात्मक और व्यापक होता है।मन्नू जी को भी यह रिश्ता अधिक उद्वेलित करता है।उनकी एक और कहानी 'सयानी बुआ' है जिसकी चरित्र-निर्मिति अनूठे ढंग से हुई है।नियमों की सख्त पाबंद, सफाईपसंद और नपीतुली व्यवस्था में जीने और परिजनों को भी वैसा ही जीवन जीने के लिए मजबूर करने वाली बुआ के घर रहकर भतीजी नहीं पढ़ना चाहती।

नारी मन के चितेरे कथाकार जैनेंद्र जब अपने उपन्यास-कहानियों में स्त्री पात्रों के अंतर्मन को कुरेदते हैं तो सामाजिक नैतिकता की श्रृंखलाएं टूटती हैं।मनोजगत का सत्य सामाजिक व्यवस्था और उसके आदर्श के अनुरूप कभी नहीं होता।उनकी पहल पर फ्रायडीय विचारधारा को समझने और कृतियों में स्त्री मन के उत्खनन की भरपूर कोशिशें अन्य रचनाकारों के द्वारा भी हुईं।स्त्री-मन का पाठ और उसके अनछुए भावों की अभिव्यक्ति पितृसत्ता के लिए एक चुनौती थी तो साहित्य जगत के लिए 'काव्य-न्याय'।वस्तुत: मन, पाषाण की भांति नहीं, जल जैसा प्रवहमान होता है।जहां उसे रास्ता मिलता है, उसकी धारा मुड़ जाती है; यही तथ्य 'यही सच है' कहानी का कथ्य है।दो शहरों- कोलकाता और कानपुर में विकसित कथावस्तु में युवती दीपा और दो युवकों- निशीथ और संजय की त्रिकोणात्मक प्रेम कहानी है।कभी दीपा का प्रेमी निशीथ था कोलकाता में, वर्तमान में कानपुर का संजय है।संजय जब भी आता, रजनीगंधा के ताजे फूलों से कमरा सुगंधित कर देता।परंतु दीपा को जब नौकरी के लिए कोलकाता जाना हुआ और निशीथ के प्रयास से ही सफलता मिली, तब उसकी मानसिक स्थिति असमंजस और अनिर्णय की होती है।कहानी का संकेत यही है कि शिक्षा और नौकरी हेतु घर से बाहर निकली युवतियों के लिए जीवन सहचर का चुनाव आसान नहीं होता।अकेली स्त्री को हर मोड़ पर कोई न कोई साथी मिलता है, मगर मनलायक तो कोई एक ही व्यक्ति हो सकता है।लेकिन एक व्यक्ति में सारे अपेक्षित गुण तो नहीं हो सकते फिर...।

युवा स्त्री-मन का एक विरोधाभास यह है कि उसके निकट जो युवक आना चाहता है उसे वह अयोग्य समझती है।मगर आकर्षित होती है उसके प्रति जो उसे भाव नहीं देता।इस मनोविज्ञान से परिचित कहानी 'अभिनेता' का पुरुष पात्र दिलीप सौंदर्य और कला की मिसाल फिल्म अभिनेत्री रंजना को प्रेमपाश में फाँसकर ठगता है और इस तरह स्वयं को उससे बड़ा अभिनेता सिद्ध करता है।ऐसे घाघ लोग लड़कियों से मन ही नहीं बहलाते, उनसे धन भी ऐंठते हैं।अंतत: ठगी की शिकार पराजित रंजना उसे लिखती है, 'दिलीप, मैं तो रंगमंच पर ही अभिनय करती हूँ, पर तुम्हारा तो सारा जीवन ही अभिनय है।बड़े ऊंचे कलाकार और सधे हुए अभिनेता हो।' यह सत्य है कि पारदर्शिता व्यक्ति का एक बड़ा गुण है, लेकिन सभी पारदर्शी नहीं होते।जो दिखता है, प्राय: वह सच नहीं होता।वर्णनात्मक शैली में लिखित इस कहानी में कहानीकार की उपस्थिति सूत्रधार-सी प्रतीत होती है।[18]

आत्मकथात्मक शैली में लिखी कहानी 'स्त्री सुबोधिनी' भी पुरुषों की भ्रमरवृत्ति, छल-प्रपंच और धोखाधड़ी जैसी कुवृत्तियों को चिह्नित करती है।किसी भी कार्यक्षेत्र में जहां स्त्री-पुरुष साथ-साथ काम करते हैं, वहां स्त्रियों का उत्पीड़न अकसर होता है।प्राय: बॉस के प्रेम-प्रपंच में फँसकर युवतियां अपनी जिंदगी बर्बाद कर बैठती हैं।स्त्री, भावुकता और सहज विश्वासी होने के कारण छद्म प्रेम को ही अपना सौभाग्य मानती हैं और भावावेग में सर्वस्व समर्पण कर बैठती हैं, मगर जब उसकी आंखें खुलती हैं तब तक उसका आत्मबल शीशे की तरह चकनाचूर हो चुका होता है।बॉस शिंदे विवाहित होने का रहस्योद्घाटन होने पर भी उसे ठगते रहने के लिए तलाक और पुनर्विवाह की आशा देता है।निस्संदेह, कहानी कामकाजी युवा स्त्रियों के लिए जागृति, समझदारी और बुद्धिमत्ता का एक पाठ देती है।

बेटी उनकी इस चिंता को समझकर और सेवा देखकर हैरान है।मृत्यु के उपरांत भी अम्मा को लगता है कि वे बमुश्किल गहरी नींद सो पाए हैं – 'कैसी बात करे है छोटी? कित्ते दिनों बाद तो आज इतनी गहरी नींद आई है इन्हें... पैर दबाना छोड़ दूंगी तो जाग नहीं जाएंगे... और जो जाग गए तो तू तो जाने है इनका गुस्सा... सो दबाने दे मुझे तो तू।खाने का क्या है, पेट में पड़ा रहे या टिफिन में एक ही बात है।' जबकि असह्य दर्द से बचाने के लिए डॉक्टर के साथ परिजन भी बाबू की मुक्ति की कामना करते हैं।लेकिन अम्मा बाबू से मुक्त नहीं होतीं, अपितु उनके ही साथ प्राण त्याग देती हैं।कहानी उन स्त्रियों की ओर उंगली उठाती है जिनके लिए पति-उत्पीड़न भी प्रेम का हिस्सा होता है।ऐसी स्त्रियां पति के प्रति पूर्णतया समर्पण में ही अपना सौभाग्य मानती हैं और अपने जीवन की आहुति देना कर्तव्य।इस कहानी का मूल उद्देश्य उन स्त्रियों की मानसिकता का दिग्दर्शन कराना है जिनके लिए पति डर का पर्याय होते हैं।अत: उनकी सारी गतिविधियां भय से संचालित होती हैं, प्यार से नहीं।फिल्मी गीत की भांति- 'जीना यहां, मरना यहां, इसके सिवा जाना कहां।' यह बोध ही उन्हें निरीह बना देता है।आधुनिक परिप्रेक्ष्य में भी ऐसी अस्मिताहीन स्त्रियां हैं जो अपने दुख से भी परिचित नहीं होतीं।तात्पर्य यह कि एक ही समय में कई सदियां अपने-अपने मूल्यों के साथ गतिशील हुआ करती हैं।अलबत्ता, परिवेशगत भिन्नता के कारण उनके शिलालेखों में अंतर होता है।[19]

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

मनोवैज्ञानिक कहानी 'तीसरा आदमी' के केंद्र में एक कुंठाग्रस्त पति है जो निस्संतान होने के कारण पत्नी पर शक करता है।कोई था जमाना, जब बांझ होने का आरोप महिलाओं पर मढ़ देना आसान होता था।लेकिन समकालीन आधुनिक शिक्षित समाज इस वैज्ञानिक तथ्य से परिचित हो चुका है कि निस्संतानता का कारण पुरुष भी हो सकता है।अत: कहानी में पति भयभीत है कि उसके पुंसत्व पर कोई उंगली न उठे।आशंका यह भी कि गोद भरने के लिए अन्य से पत्नी संबंध स्थापित न कर ले।यह दु:सह मन:स्थिति उसे रह-रहकर तोड़ती है।वह अजीबोगरीब हरकत करता है; यहां तक कि आमंत्रित साहित्यकार के गृह आगमन पर उसका तो मानसिक संतुलन ही गड़बड़ा जाता है।वैसे यह कहानी फिल्मी स्क्रिप्ट की भांति 'पति, पत्नी और वो' के तंतुओं से भी विकसित की जा सकती थी।परंतु ऐसी कथा विकसित करने की कोशिश कतई नहीं हुई है।परंतु यह सच पूरे भारतीय परिवारों का है जहां स्त्री के व्यक्तित्व विकास और सामाजिक संबंधों के विस्तार से आदर्श के व्याकरण में त्रुटियां आती हैं जिससे परिवार-समाज की भाषाएं गड़बड़ा जाती हैं।बहुधा रचनाकार विशेष मुद्दे पर लिखने के लिए एक प्रोजेक्ट की तरह काम करते हैं, किंतु मन्नू जी का लेखन विषयवस्तु, भाषा प्रवाह और अभिव्यक्ति की आत्मीयता से उनका भोगा हुआ यथार्थ-सा प्रतीत होता है।लेखकीय दुनिया उनका सुपरिचित क्षेत्र है अत: उसी भूमि से उनकी कई कहानियों का अंकुरण होता है।

'मैं हार गई' कहानी का केंद्रीय कथ्य रचना-प्रक्रिया का ही अंत:संघर्ष है।कहानीकार की धारणा है कि चरित्र निर्मिति की प्रक्रिया आसान नहीं होती।रचनाकार कहानी-उपन्यास लिखने के लिए लगातार स्वयं से, अपने कल्पित पात्रों से और समाज से ही संवाद नहीं करता, उसके समक्ष देश भी होता है।इसलिए कथानक में चरित्र निर्मिति उसके लिए बड़ी चुनौती भरी होती है।उसे बड़े सोच-विचार के साथ मशक्कत करनी होती है।बार-बार के प्रयास के बाद भी इच्छित पात्र की निर्मिति न होने पर वह पराजयबोध से ग्रसित होता है।[11]

'नई कहानी' के रचनाकारों ने संबंधों पर केंद्रित कहानियां अधिक लिखीं।स्वतंत्रता के लिए संघर्ष, बलिदान, विभाजन और खंडित आजादी के जख्म से कराहते भारतवासियों के पारस्परिक संबंधों पर आई आंच को उन्होंने अधिक महसूस किया।किंतु आश्चर्यजनक यह है कि वे राजनीतिक घटनाक्रम से सीधे-सीधे नहीं जुड़ सके।मन्नू जी की कहानियों में भी उनकी संवेदना के स्रोत वैयक्तिक संबंधों के ही इर्द-गिर्द फूटते हैं।नजदीकी संबंधों के विश्वास भी हिलते-डुलते से दिखते है।व्यक्ति, पद, परिवेश और परिस्थितियों के अनुसार सामाजिक संबंधों की शक्लें बहुरूपिया बन प्रकट होती हैं- इसे शिद्दत से महसूस किया जा सकता है उनकी कहानी 'एक प्लेट सैलाब' में।इस कहानी में परिवेश ही आलंबन रूप में प्रमुख पात्र है जिसे गेलार्ड और टी हाउस जैसे स्थलों के माध्यम से महानगरीय जीवन-शैली को निरूपित किया गया है।शाम के साढ़े छह बजते ही इन स्थानों पर दफ्तर व घरों से निकलकर हर उम्र और विभिन्न पेशों के लोग मनोरंजन हेतु पहुंचते हैं।कहानी में कहानीकार की उपस्थिति एक जासूस की भांति अध्ययनकर्ता की है जो व्यक्ति को उम्र, वर्ग और व्यवसाय के अनुसार देखता है और उसके चारित्रिक वैशिष्ट्य को रेखांकित करता है।[15]

निष्कर्ष

'रजनी' कहानी औरों से भिन्न इस रूप में है कि उसका वस्तुविन्यास नाटकीय शैली में हुआ है।इसे पटकथा की भी संज्ञा दी जा सकती है।रजनी विद्यालयीन व्यवस्था के मनमानेपन और छात्रों के प्रति भेदभाव का विरोध करने को आमादा होती है, जबकि बच्चे की मां ऐसा कुछ नहीं होने देना चाहती, क्योंकि तब उत्पीड़न का खतरा और बढ़ सकता है।कहानी में पक्षपात जैसे मसले को एक समस्या के रूप में उभारा गया है जिसके विरुद्ध रजनी खड़ी होती है और अखबारों में उसकी खूब चर्चा भी होती है जिससे वे पति-पत्नी सफलता का स्वाद चखते हैं और उनकी हिम्मत में इजाफा होता है।एक तथ्य यह भी कि जोखिम वही उठाता है जिसके लुटने का डर नहीं होता।रजनी का बच्चा भी विद्यालयी छात्र नहीं था।

कहना न होगा कि विषयवस्तु की सामानता के बावजूद मन्नू भंडारी की कहानियों का बहुचर्चित या कालजयी होना आकस्मिक संयोग नहीं, अपितु उनकी भावव्यंजक रचनाशीलता, सहज संवेद्यता, संप्रेषण और अभिव्यक्ति कौशल जैसी खूबियों का प्रतिफलन है।मन्नू भंडारी को रचना संसार में प्रविष्टि और स्वीकृति के लिए संघर्ष नहीं करना पड़ा।उनकी कृतियों को आरंभिक समय में ही स्वीकृति मिल गई और सराहना भी।विश्वविद्यालयों में उन पर कई-कई शोध-ग्रंथ लिखे जा चुके हैं और लिखे जा रहे हैं।वास्तव में स्मृतिशेष रचनाकार की कृतियों का ही वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन संभव होता है।[19]

संदर्भ

1.डा.रमेशचंद्र लवानिया - हिंदी कहानी में जीवन मूल्य पृ सं ट्ट 1
2. डा.अमिता रानी सिंह - रामचरितमानस में जीवन मूल्य - पृ सं - 28

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 4, Issue 6, June 2017

3. मधु कांकरिया - और अंत में ईशु - पृ सं ट्ट- 17
4. मधु कांकरिया - मुहल्ले में - पृ सं ट्ट- 88
5. मधु कांकरिया ट्ट कीड़े ट्ट पृ सं ट्ट 71
6. मधु कांकरिया ट्ट फैलाव - पृ सं ट्ट 71
7. मधु कांकरिया ट्ट दाखिला - पृ सं ट्ट 147

8. कमलेश्वर , मेरी प्रिय कहानियां , पृ . 56
9. वही , मांस का दरिया कहानी , पृ . 129
10. 3. कमलेश्वर , खोई हुई दिशाएं कहानी संग्रह
11. 4. सं . मधुकर सिंह , कमलेश्वर , पृ . 179
12. 5. कमलेश्वर , डाक बंगला , पृ . 65
13. 6. कमलेश्वर , राजा निरबंसिया कहानी संग्रह , पृ . 175
14. 7. सं . देवीशंकर अवस्थी , नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति , पृ . 225
15. 8. कमलेश्वर , जिन्दा मुर्दे कहानी संग्रह , पृ . 17
16. 9. वही , जिन्दा मुर्दे कहानी संग्रह , पृ . 25
17. 10. वही , पृ . 27
18. 11. कमलेश्वर , एक सड़क सत्तावन गलियां , पृ . 54
19. 12. वही , पृ . 59